ARYAVART SHODH VIKAS PATRIKA
RNI TITLED NO. UPBIL04292
RNI REG. NO. UPBIL/2014/66218 PP. NO.- 134-138
ISSN NO.-2347-2944 (Print)
e-ISSN NO.-2582-2454 (Online)
Vol.-15, No.- III, Issues-25, YEAR- July-Sept.-2022

इंसानियत मारा गया

प्रियेश कुमार तिवारी

शोध अध्येता– हिन्दी विभाग, अवधेश प्रताप सिंह विश्वविद्यालय, रीवा, (म0प्र0) भारत

Received-14.07.2022, Revised-20.07.2022, Accepted-25.07.2022 E-mail: priyeshtiwari90@gmail.com

सारांश:– *बेहद खरामा– खरामा चाल से चलते हुए इस गाँव ने भी आखिर कस्बे की दहलीज पर पांव रख ही दिए सदियों से उस गांव में समय चलता नहीं बस, रेंगता था. पांच साल बाद आप जाओ तो उस समय गोदी में लटके या उंगली पकड़कर घिसटते बच्चे आज गलियों में गिल्लीदृडंडा या कंचे खेलते मिलते और तब के कंचे खेलते बच्चो की मसें भीगती दिखाई देती. पर बस, जो भी परिवर्तन दिखाई देता शरीर के स्तर पर ही... बाकी दिलदृदिमाग और सोच–समझ तो जस की तस पर जैसे ही उस गांव ने देहाती चोला उतारकर कस्बाई धज धारण की, वहां समय रेंगने की जगह चलने लगा।*

गांव में तो चाहे युवा हो या बुजुर्ग, सबकी नजरें और पांव गांव की जमीन में ही गड़े रहते थे और अपने से संतुष्ट मन गांव की चौहद्दी के बीच ही घूमता–टहलता रहता। पर कस्बे की हवा लगते ही युवा वर्ग के पांव वहां से उखड़ने के लिए छटपटाने लगे और ललचाई नजरें शहर पर जाकर टिक गईं, पर जाएं तो जाएं कैसे? हां, दो–चार रईस परिवारों के बच्चे जरुर लोट–पोट कर जैसे–तैसे शहर पहुंच गए पर उनके अलावा उस समय न तो शहर कस्बे को अपने में समेट रहा था और न ही पैदल पसरकर खुद उसमें समा रहा था। हां, रईसों के ये बच्चे जब कभी गांव का चक्कर लगाते तो जरुर अपने साथ थोड़ा–सा शहर भी बांध ही लाते और उन्हीं के बलबूते पर गांव में अपने को किसी बादशाह से कम न समझते. उनका रहन–सहन बोली–बाली देख सुनकर गांव के युवाओं के मन में भी न जाने कितने सपने बुलबुलाने लगते पर न साधन, न सुविधा न ही जोड़–तोड़ की ऐसी कोई जुगत जो उन्हें वहां ले जाती।

कुंजीभूत शब्द– भौगोलिक परिस्थियाँ, जलवायु परिवर्तन, उत्पादन प्रबंधन एवं प्रभाव।

कस्बा बनते ही गांव का प्राइमरी स्कूल मिडिल स्कूल तो बन ही गया था और बिल्डिंग उसकी चाहे टूटी–फूटी ही रही हो पर कक्षाएं तो लगनी ही थीं. मास्टर लोग भी जबान की जगह छड़ी का प्रयोग ज्यादा करने के बावजूद कुछ तो पढ़ाते ही थे की बच्चे जैसे–तैसे पास हो ही जाया करते थे.पर मिडिल पास करने के बाद रास्ते बंद. अब करें तो क्या करें ?

यह महज एक संयोग ही था कि इसी कस्बे के एक बेहद मामूली–सी हैसियत वाले किसान रामनिझावन के बड़े बेटे गोविंदा ने जैसे ही मिडिल पास किया तो शहर से उसके मामा आ गए और प्रस्ताव रखा कि यदि जीजा चाहें और गोविंदा राजी हो तो वे उसे शहर ले जाकर बिजली के कारखाने में नौकरी दिलवा सकते है. वे खुद वहां नौकरी ही नहीं करते बल्कि थोड़ी बहुत पहुंच भी है उनकी उधर. एक बार सरकारी नौकरी मिल जाए तो समझो बादशाही मिल गई. पर बादशाही को परे सरकाते हुए बिफर गया रामनिझावन...

"अरे अइसा जुलुम न करो महेसवा... अभी तो ई हमार हाथ बटावे लायक हुआ अउर तुम हो कि... न–न, हम नाहि भेजी रहे सहर–वहर. हम खेती–बाड़ी कर वाले मजूर ठहरे... हम का करिहें सरकारी नौकरी की बादसाहत लइके ?"

पर गोविंदा, एक तो शहरी मामा का अपना चुंबकीय आकर्षण दूसरे उससे बड़ा आकर्षण शहर जाकर नौकरी करने का... फिर थाली में परोसकर सामने आए इस मौके को कैसे छोड़ दे भला ? छोटे भाई–बहनों के साथ मिलकर मोर्चा बनाकर अड़ गया गोविंदा !

रामनिझावन रोता–कलपता ही रह गया कि दो–दो बेटियों के हाथ पीले करने है... छोटे बेटे को भी पढ़ाना है, अब ई सारा बोझ मैं इक्ल्ला कइसे ढोऊंगा? अरे बड़ा बेटा ही तो सहारा हुई है बाप का... पर गोविंदा को तो जाना था सो वह चला गया. हां, इतना हौसला जरूर बंधा गया कि खेती में चाहे मैं तुम्हारी मदद न कर सकूं दद्दा पर पैसे में तुम्हारी मदद जरुर करता रहूँगा. मुझे भी अपने छोटे भाई–बहिनों का ख्याल है. उनके लिए जो हो सकेगा करूँगा.

बात का पक्का निकला गोविंदा. उसे अपने दद्दा की...भाई–बहिनों की जिम्मेदारी का पूरा ख्याल था सो वह अपने खर्चे लायक पैसे रखकर तनख्वाह के सारे रूपये दद्दा के पास भेज दिया करता. साल में दो बार जब सबसे मिलने घर आता तो सबके लिए कुछ–न–कुछ लेकर भी आता. अब रामनिझावन ने भी संतोष कर लिया कि चलो बेटा राजी–खुशी है, अपना कमा–खा रहा है... घर में मदद भी कर रहा है और सबसे बड़ी बात कि खूब खुश है. अब बच्चों के सुख से तो बड़ा और कोई सुख होता नहीं माँ–बाप के लिए.

पर यह सुख भी ज्यादा दिन के लिए नहीं लिखा था रामनिझावन की तकदीर में. पूरा पहाड़ टूटकर गिर जाता तब

अनुरूपी लेखक/संयुक्त लेखक

ISSN NO.-2347-2944 (Print)
e-ISSN NO.-2582-2454 (Online)
Vol.-15, No.- III, Issues-25, YEAR- July-Sept.-2022

भी शायद वह इस तरह चकनाचूर नहीं होता, जितना इस घटना ने कर दिया. कोई हारी–बीमारी की खबर नहीं...दुख–तकलीफ की सूचना नहीं, सीधे गोविंदा की लाश लेकर ही चला आया महेसवा तो. रामनिझावन भरोसा करे तो कैसे करे कि सामने लेटा यह आदमी जिंदा नहीं, लाश है.

गोविंदा के पुरे घर में ही नहीं बल्कि सारे कस्बे में कोहराम मच गया. देखने वालों की भीड़ टूट पड़ी. क्या हो गया. ..कैसे हो गया...कब हो गया...किसने कर दिया? एक ओर देखने वालों के प्रश्नों की बौछार तो दूसरी ओर रामनिझावन और उसकी पत्नी का छाती फोड़ क्रंदन. "अरे महेसवा, ई कउन जनम का बैर निकाला.....रे हमसे ... तू नौकरी दिलावे की खातिर ले गवा रहा कि जान लेवे की खातिर...तुमका जान ही लेवे का रहा तो हमरी लेइ लेते..." माथा ठोक–ठोक कर वह अपने को ही कोसने लगा, "का बताई, ई तो मत मारी गई ती हमरी ही जो तुम्हरे साथ भेजे रहे न. हमार बीस बरस का जवान जहान बेटा... हमरे बुढ़ापे की लाठी छिनिके का मिलि गवा रे..." दुख, आरोप, असहायता, पश्चाताप की आंच में सुलगता रामनिझावन का प्रलाप और अपराध–बोध से ग्रस्त, सारे आरोपों को चुपचाप झेलते जाने की महेश की मजबूरी.

आंसुओं में डूबा, टुकड़ों–टुकड़ों में जो बता पाया महेश उसका सार इतना ही था कि ऊपर तार पर काम कर रहा था गोविंदा और नीचे किसी ने गलती से स्विच ऑन कर दिया. करेंट दौड़ा और तार से ही चिपककर रह गया गोविंदा. रामनिझावन को कारण से कुछ लेना–देना नहीं...उसे तो बस परिणाम ने चकनाचूर करके रख दिया था. तीन दिन बाद प्रलाप का पहला दौर जरा ठंडा पड़ा तो हिम्मत करके मलहम की पुड़िया निकाली महेश ने इस उम्मीद से की इसका लेप लगते ही धीरे–धीरे घाव भरने शुरू होंगे. बहुत हिम्मत करके बोला, "देखो जीजा, गोविंदा अपनी मौत तो मरा नहीं... एक अफसर की गलती से मरा है सो सरकार मुआवजा तो देगी ही... कम नहीं पुरे पच्चीस हजार मिलेंगे... कोशिश तो करूंगा कि कुछ और भी मिल जाए और जल्दी से जल्दी ही वसूली करने में भी जान झोंक दूंगा मैं."

"चोऽऽप कर" , ऐसे दहाड़ राम निझावन की सबके सब सन्न रह गए.

"पहिले तो हमार बेटवा की जान लै ली अउर अब वहिकी कीमत चुकाना चाहता. अरे बाप हूं गोविंदा को, कौनो कसाई नहीं जो अपन बेटवा की मौत की कीमत वसूलूंगा. ई सब कमीनी बातें न कर हमरे सामने... तू दूर जा हमरी आखन के आगे से." और वह फूट–फूट कर रोने लगा. महेश ने जिस बात को मलहम समझ कर सामने रखा था, वह तो नश्तर साबित हुई, जिसके लगते ही घाव फिर रिसने लगा और आंखो से आंसू की जगह खून मवाद के रेले बह चले. रोती–कलपती पत्नी अपने भाई को भीतर ले गई और तसल्ली देकर वहीं से विदा भी कर दिया.

महेश अपमानित और आहत चाहे जितना हुआ हो पर जीजा के प्रति अपनी जिम्मेदारी नहीं भूला. तीन महीने की भाग–दौड़ के बाद वह मुआवजे के पच्चीस हजार रूपये लेकर जीजा के यहां पहुंचा पर हिम्मत नहीं हुई पहले रामनिझावन के पास जाने की. सो सीधे सरपंच के पास पहुंचा और सारी बात समझाई. जीजा की माली हालत जैसी है, उसमें कितनी मदद मिलेगी इन रुपयों से. दोनों बेटियों के ब्याह निपट जाएंगे... छोटा बेटा पढ़ जाएगा और भी छोटी–मोटी जरूरतें पूरी होंगी. इतना रुपया तो न जाने कितने साल नौकरी करके भी नहीं भेज सकता था गोविंदा. जीजा का दुख समझता हूं पर दुख अपनी जगह और जरूरतें अपनी जगह. गोविंदा तो अब आ नहीं सकता पर इन रुपयों में बहुत–सी परेशानियां तो दूर की ही जा सकती हैं. पहले आप जाकर आगा–पीछा सब समझा दीजिए, जब मान जाएंगे तो मैं जाकर उनके रुपए उन्हें थमा दूंगा.

वैसे तो सरपंच अपने वहां भी बुला सकता था रामनिझावन को पर मौके की नजाकत देखकर अपने साथ और दो–चार बुजुर्गों को लेकर वह खुद ही पहुंचा रामनिझावन के घर. ठेठ दुनियादारी की बातों में लपेटकर उसे सारी ऊंच–नीच समझाई. आगा–पीछा सुझाया. उसकी माली हालत का... जिम्मेदारियों का हवाला देकर सरपंच ने जब वह प्रस्ताव रखा उसके सामने तो उसकी झुकी हुई गर्दन और झुक गई और हाथ जोड़कर वह इतना ही कह पाया, "हमौ गरीबै सही माई–बाप, पर बाप हौं गोविंदा को... अब कसाई न बनाओ." और उसकी बाकी बात आंसुओं में ही डूब गई. इसके बाद तो बिना बोले आंसुओं में ही वह सरपंच के सारे तर्क काटता रहा. सरपंच और बुजुर्गों का सारा समझाना–बुझाना बेकार. मुआवजे के रुपए लेने के लिए रामनिझावन नहीं माना तो नहीं ही माना. हां, इर्द–गिर्द घिर आए तीनों बच्चों के मन में जरूर कुछ इच्छाएं... कुछ सपने बुलबुलाने लगे थे पर बाप के हिचकियों में बदलते रोने के आगे वे भी चुप हो गए.

आखिर तीन दिन तक बुजुर्गों में ही सलाह–मशवरा चलता रहा और फिर पानी की किल्लत को ध्यान में रखकर यह प्रस्ताव रखा गया कि इन रुपयों से गांव में गोविंदा के नाम से एक प्याऊ खुलवा दी जाए. हर प्यासा राहगीर पानी के लिए सच्चे मन से जो दुआएं देगा, वह सीधे गोविंदा की आत्मा को ही सहलाएंगी. रामनिझावन ने जब इस प्रस्ताव की बात सुनी गदगद हो गया. मेरे बेटे के नाम की प्याऊ... प्यासे लोग पानी पिएंगे और मेरे बेटे को दुआएं देंगे... इससे बड़ा पुण्य और क्या हो सकता हैं मेरे बेटे के लिए. बाप होकर भी इतना पुण्य कमा सकता था क्या मैं अपने बेटे के लिए?

ISSN NO.-2347-2944 (Print)
e-ISSN NO.-2582-2454 (Online)
Vol.-15, No.- III, Issues-25, YEAR- July-Sept.-2022

देखते ही देखते प्याऊ बन गई और गोविंदा के नाम का बोर्ड भी लग गया उस पर. पहले दिन तो रामनिझावन ने खुद बैठकर सबको पानी पिलाया और उसे लगा जैसे उसका दुख सबके सुख में बदल गया. फिर तो खेत से आते–जाते कुछ देर खड़े रहकर उसी को निहारता... गोविंदा के नाम का बोर्ड देखकर पानी पीने वालो से ज्यादा उसका अपना मन जुड़ा जाता. सरपंच कभी मिलते तो कहते, " देख रे रामनिझावन. कितै प्यासों की दुआएं मिल रही हैं तेरे गोविंदा को'. तो वह गदगद भाव से सिर झुका लेता.

पता नहीं,पानी पीने वालो की दुआएं गोविंदा तक पहुंचती या नहीं पर रामनिझावन के परिवार तक तो जरूर ही पहुंची रहीं. तभी तो इन पच्चीस सालों में उसकी दोनों बेटियां अच्छे घरों में ब्याहकर आज अपने फलते–फूलते परिवार के साथ प्रसन्न है. उसका छोटा बेटा गोपाल भी दो बच्चो का बाप हैं जो रामनिझावन अपने बच्चों को दूध–दही खिलाने के लिए कभी एक भैंस नहीं खरीद सका उसने अपने पोतों के लिए एक भैंस भी खरीद ली. अपने घर के एक हिस्से को पक्का करवा दिया जिससे गोपाल का परिवार आराम से रह सके. उसे तो अपने कच्चे घर में रहने की आदत, सो वह तो उसी में आराम से रहता. इससे ज्यादा सुख की तो वह अपने लिए कल्पना ही नहीं कर सकता था और यह सब वह उस पुण्य का प्रताप ही समझ रहा था जो पानी पिलाकर उसके खाते में जमा हो रहा था.

अब इन पच्चीस सालों में उस कस्बे का क्या हाल हुआ, वह भी देखिए. शहर और कस्बे के बीच बस क्या चलने लगी कि उसमें लदकर सवारियों के साथ टुकड़ों–टुकड़ों में शहर भी कस्बे में आने लगा. कस्बे के हाट–बाजार शहरी सामानों से भरने लगे तो वहां के लोगों के मन उन्हें पाने की उमंग भरी ललक से. किशोरों और युवाओं ने अपनी टांगो से पजामे उतारकर जींस चढ़ा लीं और उनकी कलाइयों में घड़ियां चमचमाने लगी. धूप होने पर वे भीं काले चश्मे पहनकर घूमते. लड़कियां भी होठों पर गहरे रंग की लिपस्टिक पोते, माथे पर चमकीली बिंदियां चिपकाए... रंग–बिरंगे कपड़ों में अपने को मिस इंडिया से कम नहीं समझती. जैसे–जैसे बाजार नए–नए सामानों से भरता जाता उन्हें खरीदने के लिए पैसे की जरुरत बढ़ती जाती. और सामान और पैसा... और सामान और ज्यादा पैसा.

दस साल की उम्र से रामनिझावन के साथ खेती–बाड़ी करने वाले उसके छोटे बेटे गोपाल के मन में भी शहर कब और कैसे पैदल पसर गया. रामनिझावन को इसका पता ही नहीं लगा. लगता भी कैसे? अंटी में संतोष धन की कुंजी बांधे उसकी दुनिया तो आज भी खेत और घर तक ही सिमटी हुई थी. पर गोपाल को अब संतोषधन–असली धन चाहिए था और इसलिए उसने धीरे–धीरे खेती का काम बाप के कंधो पर डाल शहर के चक्कर लगाने शुरू किए. जब–जब वह शहर जाए. .. वहां की चकाचौंध उसके मन में नित नई हवस जगाए. पर वह हवस पूरी हो तो कैसे ? बिना पढ़ाई के अच्छी नौकरी मिलने से रही... रहा कोई धंधा सो उसके लिए पैसा चाहिए. जिस भी धंधे की बात सोचता, बात पैसे पर आकर अटक जाती. हर असफलता से हताशा जनमती और हताशा से जनमता गुस्सा और गुस्सा जाकर टिकता रामनिझावन पर. और एक दिन आखिर वह खम ठोककर बाप के सामने खड़ा हो ही गया.

"दद्दा मुझे तो न पढ़ाया न लिखाया. बैलों की पूंछ मरोड़ते–मरोड़ते आधी जिंदगी तो बर्बाद हो गई मेरी...पर अब बची जिंदगी में कुछ बनना चाहता हूं.. पैसा कमाना चाहता हूं सो समझ लो कि अब नहीं करना मुझे तुम्हारी यह खेतीबाड़ी." और बड़ी हिकारत से उसने अपना मुहं झटक दिया.

रामनिझावन ने जो सुना, जो देखा तो अवाक !

"कइसो बात करे रे बेटा तू? अरे ई तो हमार पुश्तैनी धंधा हैं. ई नाही करिहें तो का करिहें?"

"क्या रखा है इस पुश्तैनी धंधे में. हाड़–तोड़ मेहनत करो तो दो जून की रोटी मिल जाए बस. जिस साल असमान से पानी न बरसे तो बैठे–बैठे आंखो से पानी बहाते रहो. कोई धंधा हैं साला यह भी?"

दो साल से गोपाल के बदले मिजाज तो देख रहा था रामनिझावन और उसने खेती का ज्यादा काम अपने कंधो पर ले भी लिया था पर बात इतनी बढ़ गई हैं, यह नहीं समझ पाया था– उसका सुर और तेवर देखकर बड़े ठंडे मन से उसने कहा "तोर मन नहीं लागत अब खेती मा तो तू कौनो अउर काम देख ले आपन मन का. साठ का भवा तो का भवा... अबहूं हाड़–गोड़ में इत्ता जोर तो हइहं कि अकेले ही आपन खेती कर सकत हूं."

"हां, अब तुम्हीं करो अपनी खेती... मैंने तो अपने लिए दूसरा काम देख भी लिया है. अब दिखाता हूं कि कैसे किया जाता है काम और कैसे कमाया जाता है पैसा. पर मुझे अपने काम के लिए पचास हजार रुपए चाहिए और यह रुपए तुम्हें देने होंगे."

सुना तो रामनिझावन तो जैसे आसमान से गिर पड़ा. उसे अपने कानों पर विश्वास ही नहीं हो रहा था... ये क्या ख रहा है गोपाल? इत्ते रुपए तो उसने अपनी जिंदगी में कभी देखे ही नहीं. इसे कहां से लाकर दे ? गुमसुम–सा वह गोपाल

ISSN NO.-2347-2944 (Print)
e-ISSN NO.-2582-2454 (Online)
Vol.-15, No.- III, Issues-25, YEAR- July-Sept.-2022

का मुहं ही देखता रहा।

"मेरा मुहं क्या ताक रहे हो... सुना नहीं क्या की मुझे रुपए चाहिए पचास हजार. तय कर लिया हैं मैंने. मुझे बीच बाजार में दुकान खोलनी है एक. शहर के एक–दो लोगों से बात भी कर ली है. वह तीन महीने की उधारी पर सामान देने को तैयार हैं... पर बेचने के लिए दुकान तो चाहिए. आज बड़े बाजार में एक छोटी सी दुकान भी खरीदो तो पचास हजार से कम में नहीं मिलेगी."

"गोपाल!" रामनिझावन कुछ ऐसे बोला मानो विश्वास करना चाह रहा हो कि सामने बैठा यह आदमी उसी का बेटा है. फिर धीरे से बोला, "बेटा, पांच सात बरस में पइसा–कौड़ी का हिसाब तोहार हाथन में ही तो रहा. अनाज तू बेचत रहा. खाद–बीज तू खरीदन रहा... अउर घरौ तू ही ले चलावत रहा. अइसे में हमरे पास पइसा कहां..."

"जानता हूं... जानता हूं, तुम्हारे पास पचास रुपए क्या पचास पैसे भी नहीं मिलेंगे और हिसाब–किताब रखने से क्या होता है? इस बित्ते भर की खेती से तो पेट भर लेते थे सो ही बड़ी बात. कोई काम है यह भी. पर मुझे तो पैसा चाहिए ही चाहिए. बस, यह कह दिया मैंने."

क्षण भर को दोनों चुप और फिर गोपाल ने अपना निर्णय सुना दिया, "रुपए नहीं हैं तो बस फिर एक ही उपाय है. बीच बाजार में बनो प्याऊ को हटाकर मैं दुकान खोल लेता हूं उस जगह. दुकान के लिए इससे अच्छी जगह तो और कोई हो ही नहीं सकती."

"गोपाऽऽल!" अपनी सारी ताकत लगाकर चीख पड़ा रामनिझावन. "ई प्याऊ नहीं रे! ई तो निशानी है हमार बेटवा की.. हमार गोविंदा की... तोहार बड़ा भाइयां तो रहा ऊ... अउर तू है कि..." और आवाज भरभराकर टूट गई उसकी।

"अरे जब था तब था. पच्चीस बरस हो गए उसे मरे खपे. अब क्या सारी जिंदगी उसे छाती से चिपकाए ही बैठा रहूंगा?"

"ई का कहत है रे तू... अइसी बात न बोल... न..."

बात बीच में ही काटकर गोपाल बोला, "तुम्हारा बस चले तो तुम तो उस मरे बेटे के लिए अपने इस जिंदा बेटे को मार दो."

दोनों हाथों से बरजता हुआ, अंसुवाई आंखो से गिड़गिड़ाते हुए रामनिझावन ऐसे बोला मानो याचना कर रहा हो.

"न बोल अइसी बात... न बोल रे अइसी बात. आज तू ही तो हमार सब कुछ है... तू अउर तोर बेटवा हो तो जिनगी है हमार... ई तू काहे समझत नाहीं रे !"

"अच्छा. जिंदगी हूं तुम्हारी तो बस प्याऊ सुपुर्द कर दो मेरे।"

रामनिझावन बोले तो क्या बोले? उस बेचारे से तो न बोलते बने, न प्याऊ देते बने. हाथ जोड़कर किसी तरह इतना ही कह पाया, "बेटा, ई प्याऊ न तोहरी कमाई से बनी, न हमरी कमाई से. ई तो गोविंदा की मौत की कमाई से बनी. तू ही सोच ई पर कइसे हक जमा सकित हैं हम ?"

इस बार भन्ना गया गोपाल. सोच रहा था की उसकी बात, उसकी जरूरत सुन–समझ कर राजी हो जाएगा दद्दा पर ये तो उस मरे बेटे को ही छाती से चिपकाए बैठा है. धिक्कार भरे स्वर में बोला, "अरे, बरसों हो गए उसकी मौत को और मौत की कमाई को. आज तो वह सब किसी को याद भी नहीं होगा. आज तो हमी मालिक हैं उस प्याऊ के. हम जो चाहे करे."

"बेटे की बात छोड़... यही समझ कि प्यासन को पानी पिलाई के तो धरम होत है... पुन्न मिलत है तू काहे..."

बात बीच में ही काटकर बड़े व्यंग्य से बोला गोपाल, "धरम... पुन्न... ये सब रईसों के चोंचले हैं... मुझे नहीं चाहिए तुम्हारा ये धरम–पुन्न! मुझे तो अपनी दुकान के लिए बस प्याऊ चाहिए।"

"आपन खातिर जिंदा तो सबै रहत हैं बेटा पर मानुस जनम लेकर दूसरन के खातिर भी कछु करैका चाही के ना?"

"अपना ठौर–ठिकाना नहीं और दूसरे की खातिर करने चले हैं. बहुत कर लिया दुसरो के लिए. अब तो जो कुछ करना है मुझे अपने लिए करना है. सोचा था मेरी जरुरत समझकर तुम खुशी–खुशी दे दोगे प्याऊ. पर तुम नहीं देने वाले तो इतना समझ लो कि लेना मुझे भी आता है. देखता हूं कौन रोकता हैं मुझे और कैसे रोकता है?" और गुस्से से दनदनाता हुआ गोपाल बाहर निकल गया।

रामनिझावन को जैसा सदमा गोविंद की लाश को देखकर लगा था, वैसा ही सदमा गोपाल की बातें सुनकर लगा. उसे तो बिजली के तार ने मार दिया था, पर उसे? गोविंदा की दैहिक मौत थी! गोपाल की आत्मा मर चुकी है! यह सवाल बड़ा है कि गोविंदा को तो बिजली के तार ने मार दिया था पर गोपाल को किसने मारा? उसकी चुनौती से सिहरकर बेहद लाचार, बेबस रामनिझावन ने घुटनों में सिर छिपा लिया।

ISSN NO.-2347-2944 (Print)
e-ISSN NO.-2582-2454 (Online)
Vol.-15, No.- III, Issues-25, YEAR- July-Sept.-2022

बाहर निकलकर गोपाल सीधा अपने उन दो दोस्तों के पास गया जिन्होंने कमीशन पर उधारी के सामान दिलवाने का जुगाड़ कर रखा था. वे उसी का इंतजार कर रहे थे. उसे देखते ही पूछा "क्या हुआ, मिल जाएगी प्याऊ?" गुस्से से भन्नाए हुए गोपाल ने गर्दन झटक कर कहा "बहुत कहा, समझाया, अपनी जरुरत बताई पर मानता ही नहीं बुढऊ . बैठा रहने दे उसे अपने मरे बेटे और धरम–पुन्न को छाती से चिपकाए–चिपकाए. चलो मेरे साथ... मैं ठिकाने लगाता हूं... उसका पुन्न प्रताप! आखिर क्या बिगाड़ लेगा वह मेरा..." और अपने दोनों दोस्तों को लेकर एक दृढ़ संकल्प के साथ वह प्याऊ की ओर बढ़ गया!

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. मन्नू भंडारी : "महाभोज" सन् 1979.
2. जगदीश चन्द्र : धरती धन न अपना।
3. मोहन नैमिशराय : अपने दृ अपने पिंजरे (भाग– एक 1995 ई० भाग– दो सन् 2000).
4. ओम प्रकाश बाल्मिकी : जूठन सन् 1997.
5. सूजन पाल चौहान : तिरस्कृत सन् 2002.
6. डॉ. तुलसी राम : मुर्दहिया सन् 2010.
7. राहुल सांकृत्यायन : वोल्गा से गंगा तक।
8. उग्रः फागुन के दिन चार।
9. रांगेय राघव : कब तक पुकारूं।
10. फणीश्वर नाथ "रेणु" : मैला आँचल, परती परिकथा, पल्टू बाबु रोड।
11. अमृतलाल नागर : सतरंज के मोहरे, अमृत और विष।
12. उदयशंकर भट्ट : लोक–परलोक।

*****